वास्तविकता से परे

आज के इस बढ़ते फैशन के युग में लोग अपनी पहचान भूल गए हैं। भूल गए हैं कि वे किस देश के वासी हैं। उनकी संस्कृति क्या है? संस्कार क्या है? शास्त्र क्या है? मर्यादा क्या है? व्यवहार क्या है? चरित्र कैसा होना चाहिए? यदि उन्हें पता है तो बस यह पता है कि अपने आपको औरों के सामने कैसे दिखाना है चाहे इसके लिए उन्हें कैसी भी कीमत क्यों न चुकानी पड़ें।

मैंने कई बार शादी के अवसर पर या और किसी उत्सव पर देखा है कि लोग मंहगे से महंगे कपड़े व गहने पहनकर उत्सव में सम्मिलित होते हैं। अपने आपको सजाने के लिए ब्यूटीपार्लर जाते हैं जहाँ पर उन्हें अच्छी खासी कीमत चुकानी पड़ती है। स्त्रियों की तुलना में पुरूषों की संख्या कम है अर्थात् पुरूष कम ही जातें हैं अपने आपको सजाने के लिए। स्त्रियों में परस्पर होड़ रहती है कि मैं अमुक स्त्री से ज्यादा सुन्दर दिखूँ। सुन्दर दिखने के कारण स्त्रियाँ अपनी प्राकृतिक सुन्दरता खो देती हैं। इतना ज्यादा मेकअप कर लेती हैं कि सुन्दर लगने के स्थान पर नाटकीय रूप अधिक लगता है इसी के साथ सजसँवरकर विवाह में आकर नाच गाने के कार्यक्रम में बढ़चढ़कर भाग लेती हैं। उन्हें इतनी भी लज्जा नहीं आती कि बुजुर्गों के सामने वह नृत्य कर रही हैं। सजना सँवरना स्त्रियोचित गुण है किन्तु एक मर्यादा में रहकर होना चाहिए और रहा नाचने गाने का प्रश्न? तो वह भी मर्यादित होना चाहिए।

अब जरा प्राचीन युग की ओर दृष्टिपात करतें हैं। प्राचीन काल में विवाह को संस्कार के रूप में सही अर्थ में माना जाता था। विवाह का उद्देश्य होता था। विवाह का समय दिन का होता था तथा स्त्री और पुरूष मर्यादित थे। स्त्रियाँ मर्यादोचित वेशभूषा व श्रृंगार करती थी। एक उदाहरण वाल्मीकि रामायण से लेते हैं – जब कैकयी के पास सीता जी विवाहोपरान्त आशीर्वाद लेने आई तो उन्होंने आशीर्वाद देते समय कहा कि मैं तुम्हारे मर्यादापूर्ण व्यवहार व सुन्दरता से बहुत प्रसन्न हूँ इसी के कारण उन्होंने अपना महल उन्हें दे दिया। कहने का तात्पर्य कि सीता जी की शालीनता को देखकर कैकेयी भी प्रभावित हुए बिना नहीं रहीं।

आधुनिक युग की नारी संस्कार व सभ्यता से विहीन अपने आपको केवल सजाने सँवारने में लगी रहती हैं। सादा जीवन उच्च विचार केवल पुस्तकों में दबकर रह गया है। बाहरी दिखावें में लगे लोग तथा इस शरीर को सत्य मानने वाले क्या जाने कि इस नश्वर शरीर को सजाना एक शव को सजाने के समान है।

श्रीलप्रभुपाद के अनुसार कितना दुर्भाग्य है उन लोगों का जो शरीर और जीवन की सारता को न जानकर निः सारता और नश्वरता की ओर भागते हैं। शरीर का अधिष्ठाता आत्मा है। शरीर आत्मोन्नति का साधन है न कि मनोरंजन का इसी सन्दर्भ में श्रीमद्भागवतम् में वर्णन है कि जो शरीर पहले भयानक हाथियों या सोने से समाए हुए रथों पर सवार होता है और राजा के नाम से जाना जाता है वही बाद में आपकी अजेय काल–शक्ति से मल, कृमि या भस्म कहलाता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका तथा अन्य विकसित राष्ट्र में मृत शरीर स्वच्छ ढ़ंग से प्रसाधनों का लेप करके ठिकाने लगा दिए जाते हैं। किन्तु संसार के अनेक भागों में वृद्ध, रूग्ण तथा क्षति ग्रस्त लोग एकान्त में या उपेक्षित स्थानों में मर जाते हैं, जहाँ कुत्ते तथा सियार उनके शरीरों को खाकर मल में परिणत कर देते हैं। यदि कोई इतना भाग्यशाली होता है कि उसके शरीर को भूमि में दफनाया जाता है तो छोटे–छोटे कीड़े मकोड़े उस शरीर को खा जाते हैं। इसी तरह अनेक पार्थिव शव जलाकर भस्मीभूत कर दिए जाते हैं। हर तरह से मृत्यु निश्चित है और अन्ततः शरीर का भाग्य कभी यशस्वी नहीं है। यही मुचुकन्द के कथन का वास्तविक

तात्पर्य है – अर्थात् जो शरीर अभी राजा, राजकुमार, रूपमती रानी, उच्च मध्य वर्ग आदि कहलाता है वह अन्ततोगत्वा मल, कृमि तथा राख कहलाता है। श्रील श्रीधर स्वामी के अनुसार –

योनेः सहस्राणि बहूनि गत्वा

दुःखेन लब्ध्वापि च मानुषत्वम्

सुखावहं ये न भजन्ति विष्णुं

ते वै मनुष्यात्मनि शत्रुभूताः

हजारो योनियों से गुजरते हुए तथा अत्याधिक संघर्ष करते हुए बहुजीव अन्त में मनुष्य रूप प्राप्त करते हैं। अतः मनुष्य जो अब भी उन विष्णु की पूजा नहीं करते जो उन्हें असली सुख प्रदान करने वालें हैं, वे निश्चित रूप से अपने आपके तथा मानवता के शत्रु बने हुए हैं।

अर्थात् मनुष्य होकर जो भगवान का नाम नहीं लेता और सदैव इन्द्रियतृप्ति में लगा रहता है तो उसका ऐसा मनुष्य जीवन व्यर्थ है।

बचपन से ही बच्चों को ऐसे संस्कार दिए जाने चाहिए जिसमें वे जीवन में सादगी से रहना सीखें और जीवन की असलियत से परिचित हों इसके लिए माता–पिता को स्वयं सयंमित जीवन जीकर बच्चों में अच्छे संस्कार डालने होंगे क्योंकि बच्चा बड़ों का ही अनुकरण करता है। आजकल फैशन की स्पर्धा व दिखावे की स्पर्धा ने मनुष्य को पागल बना दिया है। मनुष्य अपनी वास्तविकता से कोसो दूर हो चुका है उसे अपनी पहचान तभी पता चलेगी जब वह परम पिता परमेश्वर से अपने मन को जोड़ेगा। क्योंकि हम अपने परम पिता परमेश्वर का धाम छोड़कर स्वतन्त्र रूप से जीने के लिए इस धरा पर आएँ हैं किन्तु दयालु भगवान् श्री कृष्णा हमें हमारे स्वरूप से अवगत श्रीमद् भगवद् गीता तथा श्रीमद् भागवतम् के माध्यम से करातें हैं और कहते हैं कि 'हे जीव। अब तो जाग जाओ।' अतः हमें जीवन के लक्ष्य को जानना है और जीवन की वास्तविकता को पहचानना है तभी हम इस संसार में और अन्य लोक में सुखी होगें।

डा0 निशि त्रिखा
प्र0 स्ना0 अ0 संस्कृत
वायु सेना उच्च0 मा0 विद्यालय
रेस कोर्स
नई दिल्ली